नदी बहती रहे

लेखक परिचय :

भगवती शरण सिंह

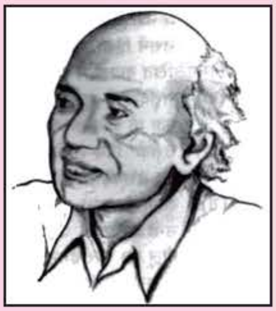

भगवती शरण सिंह का जन्म सन् 1919 में वाराणसी में हुआ था। उनकी शिक्षा वाराणसी तथा इलाहाबाद में हुई। भारत सरकार की प्रशासनिक सेवा में उनका चयन हुआ। उन्होनें उत्तरप्रदेश, हिमाचल प्रदेश व भारत सरकार की केन्द्रीय सेवा में अनेक उच्च पदों पर कार्य किया। उन्होंने सन् 1977 में उत्तरप्रदेश शासन सेवा में आयुक्त तथा सचिव पद से अवकाश ग्रहण किया ।

अपने प्रशासनिक दायित्व को पूरा करते हुए उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया । उन्होंने नागरी लिपि सुधार समिति के सदस्य, सचिव, वैज्ञानिक शब्दावली समिति के सचिव, उत्तरप्रदेश सूचना विभाग के निदेशक, स्वतंत्रता संग्राम इतिहास लेखन सलाहकार समिति के सदस्य तथा उत्तरप्रदेश हिन्दी समिति के सचिव आदि पदों पर रहकर स्वयं को हिन्दी साहित्य से जोड़े रखा।

उनका लेखन कार्य सन् 1938 में कहानी लेखन और वैयक्तिक निबन्धों से शुरू हुआ। वे सदैव हिन्दी साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियों से जुड़े रहे और अनेक विधाओं में साहित्य का सृजन करते रहे। उनकी बीस पुस्तकें प्रकाशित हुई- अपराजिता, जंगल और जान (कहानी संग्रह), मानव के मूल में, साहित्य पहचान और पहुँच (निबंध संग्रह) हमनील, वनपाहुन (प्रकृति और वन) विशेष उल्लेखनीय हैं।

भारत नदियों का देश रहा है। नदियों को देवी मानने के साथ ही आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन का प्रतीक माना गया है। वन, पर्वत और नदियों का आपस में अटूट रिश्ता है। जनसंख्या के बढ़ते दबाव और औद्योगीकरण के विकास के कारण उजड़ते वन, नदियों में बढ़ता जल प्रदूषण चिन्ता का विषय बनता जा रहा है। स्वयंजात वनों का शनैः शनैः समाप्त होना और विकास के नाम पर देश के स्वास्थ्य सुख समृद्धि की समग्रता न होना गम्भीर प्रश्न बन गया है। आवश्यकता है जागरुक होने की, अपनी जमीन को पहचानने की और वनस्पतियों की रक्षा कर नदियों को स्वच्छ प्रवाहित करने की ।

भारत नदियों का देश रहा है। इसलिए नहीं कि इस देश में नदियों की ही अधिकता है बल्कि इसलिए कि इस देश में नदियों का विशेष रूप से सम्मान हुआ है। वे हमारे जीवन में बहुत महत्व रखती रही हैं। उनसे हमारा आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन समृद्ध हुआ है। आज वे अपना प्राचीन महत्व खोती जा रही हैं। प्राचीन ग्रंथों में विशेषकर वेदों, ब्राह्मण ग्रंथों और पुराणों में हमारे वनों, पर्वतों और नदियों के बारे में प्रचुर सामग्री मिलती है।

नदियों को देवियों का स्वरूप दिया गया। हर संकल्प में जिस 'जंबूद्वीपे भरत खंडे' का उच्चारण प्रत्येक भारतीय सुनता रहता है वह नदियों का यह आवाहन भी सुनता रहता है–

'गंगे यमुने चैव गोदावरी सरस्वती । नर्मदे–सिंधु कावेरी जलेस्मिन् सन्निधिं कुरु। ' इन नामों को सुनने वाला भारतीय न केवल सात प्रमुख नदियों का नाम जानता रहता है, वरन् उसे भारत की एकता का भी ज्ञान होता रहता है।

जिस प्रकार वनों का वृक्षों से, नदियों का जल से संबंध है, उसी प्रकार नदियों का वनों से भी संबंध मानना चाहिए। वनों के रहते नदियाँ स्वतः फूट पड़ती हैं, प्रवाहित होती रहती हैं। वन नहीं रहेंगे तो नदियाँ नहीं रहेगी। नदियों के न रहने पर हमारी संस्कृति विच्छिन्न हो जाएगी। हमारा

जीवन – स्रोत ही सूख जाएगा। अत: वनों की आवश्यकता और महत्ता को अस्वीकार करके न तो हम आर्थिक उन्नति के सोपान गढ़ सकते हैं और न स्वास्थ्य और सुख की कल्पना ही कर सकते हैं।

आदमी की जिन्दगी अपने-आप में बहुत ही अकेली और नीरस होती है। आदमी-आदमी के रिश्ते नाते उसका बहुत दूर तक साथ नहीं देते । पर जब वह इनसे आगे बढ़कर एक व्यापक संबंध कायम करने की कोशिश करता है, तो उसके साथ वन, पर्वत, नदी आदि सब चल पड़ते हैं । तब वह अकेला नहीं रह जाता । आज वह वनस्पतियों और पानी के रिश्ते को भूलकर अपने को भी अकेला बना रहा है और उनके आपसी संबंधों का भी विच्छेद करता जा रहा है। गंगा, यमुना, गोदावरी, नर्मदा और कावेरी आज भी भारत में बह रही हैं, पर अब वे मोक्षदायिनी नहीं रह गई हैं।

गंगा की उन्नीस प्रमुख सहायक नदियाँ बताई गई हैं। गंगा के ऊपरी प्रवाह में अलकनन्दा, मंदाकिनी के जल से आपूरित होकर इसमें मिलती है तत्पश्चात रामगंगा, गोमती, धूतपापा, तमसा, सरयू (घाघरा), गंडकी, कमला, कौशिकी (कोसी), शोण आदि नदियाँ अपने जल में नगर क्षेत्रों का मल एकत्र करती हुई, बड़े-बड़े कल-कारखानों का उच्छित बटोरती हल्दिया के पास सागर संगम करती हैं। भागीरथी और पद्मा के अतिरिक्त उसमें कई अन्य नदियों का भी जल मिलता है। फिर भी पानी के बहाव की कमी के कारण वहाँ इसमें बड़े-बड़े सिकतामरु बन जाते हैं जो जहाजों को आने से रोकते रहतें हैं । जब इस पुण्यतोया नदी का यह हाल हो रहा है तो औरों का क्या कहा जाए।

गंगा के डेल्टा के समुद्रांत छोर ने वनाच्छादित एक विस्तृत दलदली क्षेत्र को घेर रखा है जिसे सुंदरवन कहा जाता है। इस सुंदरवन की दर्दनाक दशा की खबरें आए दिन अखबारों में छपती रहती हैं। अब सुंदरवन भी सुंदर नहीं रह गया। गंगा का केवल पौराणिक महत्त्व ही नहीं है। उसे आज के संदर्भ में भी देखना होगा।

यही हाल यमुना का भी है। यह गंगा की पहली तथा बड़ी पश्चिमी सहायक नदी है। यह हिमालय पर्वतमाला में कामेत पर्वत के आगे से निकलती है।

जरा-सा भी ध्यान दिया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि सारा भारत आज भी प्रमुख नदियों के समूह में बँटा हुआ है। मध्यदेश में गंगा-यमुना समूह, पूर्व में ब्रह्मपुत्र-मेघना समूह, पश्चिम में नर्मदा -ताप्ती समूह, दक्षिण-पूर्व (उड़ीसा) में महानदी समूह हैं । दक्षिण भारत में कृष्णा नदी समूह और कावेरी नदी -समूह । सिंधु नदी समूह की बात अब नहीं की जा सकती । इसी प्रकार ब्रह्मपुत्र -मेघना समूह से सिंचित अधिकांश क्षेत्र अब बांग्लादेश ही है। पर सरस्वती दृषद्वती समूह से अनुप्राणित भू-भाग अभी भी भारत में ही हैं। कुछ नदियों के विस्तृत विवरण के सहारे प्राचीन भारत के इतिहास पर विशेषकर उसके सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष पर प्रचुर प्रकाश पड़ता है। इन नदियें के किनारे बसे नगर या तो विशाल एवं शक्तिशाली राज्यों की राजधानियाँ थे अथवा शिक्षा और व्यवसाय के केंद्र। मंदिरों की भी स्थापना इनके किनारे हुई। इस कारण ये हमारी स्थापत्यकला की भी स्मृतियाँ जगाती रहती हैं । इन मंदिरों का प्रश्रय पाकर जिस प्रकार संगीत, नृत्य और नाट्य – कला की सृष्टि और संवर्धन हुआ उसमें भी उन नदियों का महत्त्व अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

भारतीय-भू-भौगोलिक स्थिति को ठीक-ठीक समझने के लिए यहाँ के पर्वत-समूहों और नदी-समूहों का विस्तृत अध्ययन आवश्यक है। इन पर्वत और नदी-समूहों के परिप्रेक्ष्य में भी भारत का पूरा चित्र बनता ही नहीं, जब तक उसकी वनराशि को सम्मिलित न किया जाए। कालिदास के समय तक भी इस देश का अधिकांश भाग जंगलों से आवृत्त था। प्राप्त प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व तक इस देश में स्वयंजात वन की स्थिति बनी रही । इसके उदाहरण स्वरूप कुरूप्रदेश के कुरूजंगल वन्य क्षेत्र को उपस्थित किया जा सकता है। साकेत में अंजनवन तथा वैशाली और कपिलवस्तु में महावन प्राकृतिक (स्वयंजात) वन थे। वैशाली नगर के बाहर महावन निरंतर हिमालय तक फैला हुआ था। कपिलवस्तु के महावन की भी यह दशा थी। कौशांबी से कुछ दूर और श्रावस्ती के तट में पारिलेण्यकवन था, जिसमें हाथी रहते थे। रोहिणी नदी के तट पर स्थित लुंबिनी वन भी एक प्राकृतिक जंगल था। इस प्रकार यह देश, नदियों पर्वतों और वनों से भरा-पूरा संसार के देशों में अतुलनीय था, पर मानव आबादी कम थी।

आज स्थिति कुछ दूसरी ही है । भारत की विशाल और बढ़ रही आबादी के लिए पानी की माँग, घरेलू उपयोग, कृषि-उद्योग, मछली पालन उद्योग, नौवहन, विद्युत उत्पादन के लिए पूरी की जानी है। इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि सारे देश में जल प्रदूषण का प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस संबंध में दूषित पानी से उत्पन्न होने वाली छूत की बीमारियों, जैसे- हैजा, पीलिया, टाइफाइड तथा मछलियों और कृषि उपज को हो रही हानि का उल्लेख किया जा सकता है। उत्तर में डल झील से लेकर दक्षिण में पेरियार और यालियार नदियों तक पूरब में दामोदर और हुगली से लेकर पश्चिम में थाणा की सँकरी खाड़ियों तक, सब जगह जल-प्रदूषण की स्थिति चिंता का विषय बनी हुई है। यहाँ तक कि गंगा जैसी बारहमासी नदियाँ भी जल प्रदूषण से बहुत अधिक ग्रस्त हैं। मानव बस्तियों और उद्योगों का गंदा पानी सीधे जल-प्रवाह में मिल जाता है, जो अधिकांश रूप से उपयोग करने लायक नहीं रह जाता । रोजाना जिस प्रकार गंदा पानी छोड़ा जा रहा है उससे प्राकृतिक जल, जैसे – नदियों, खाड़ियों और समुद्र तटवर्ती पानी को खतरा पैदा हो गया है। अतः ऐसी स्थिति में न कश्मीर ही स्वर्ग रह गया और न काशी ही तीन लोक से न्यारी रह गई । जब गंगा गंगा न रही तब काशी की क्या स्थिति रहेगी?

इस देश की नदियाँ ही इसकी शोभा रही हैं । जिस देश की 80 प्रतिशत जनसंख्या नदियों के घाटी-क्षेत्र में निवास कर रही हैं, उसे जब पुराणों में असंख्य नदियों का देश कहा गया तो अतिशयोक्ति नहीं थी। जब यह तथ्य सामने आ गया है तो आवश्यकता इस बात की है कि प्रदेशों के कृषि विभाग और वन विभाग तथा सिंचाई आदि विभागों की अलग-अलग अमलदार समाप्त कर दी जाए। हर प्रदेश में जलागम-क्षेत्र अधिकरणों की स्थापना करके विकास की योजनाएँ एक ही अधिकरण के अधीन इस प्रकार समन्वित करके चलाई जाएँ कि देश के स्वास्थ्य, सुख और समृद्धि की समग्रता सदा आँख के सामने बनी रहे और ऐसा न होने पाए कि एक ही शरीर का एक हाथ दूसरे हाथ को काटता रहे और शरीर भी नष्ट होता रहे। जाहिर है कि वनों और नदियों का बड़ा घनिष्ठ संबंध है और वन नदियों को न केवल उथली होने से बचाते हैं वरन भूमिगत जल को सुरक्षित रख कर नदी के पानी की कमी को भी पूरा करते रहते हैं । भारत में वनों से आच्छादित भूमि का अभाव दिनों-दिन तेजी से बढ़ता जा रहा है।

भारत में वन्य पशुओं और पक्षियों, वनस्पतियों और जलाशयों की विविधता और बहुलता को सभी मानते रहे हैं। इस संबंध में योजना आयोग का उद्धरण आवश्यक जान पड़ता है- "भारत पशु तथा प्राणी संपदा से भरपूर होने के कारण प्राकृतिक जीवित संसाधनों की विपुल विविधता से संपन्न देश है, जिस पर लाखों व्यक्ति अपने निर्वाह के लिए आश्रित है तथा जलभूमि के उचित प्रबंध द्वारा जहाँ देश की मूलभूत जैविक उत्पादकता का संरक्षण पारिस्थितिकीय दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यहाँ इसकी अनुवांशिक विविधता की रक्षा तथा उसकी प्रजातियाँ और पारिस्थितिकीय व्यवस्था का संरक्षण केवल उन्हें लगातार उपयोग में लाने की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि हमारे लोगों के भावी अस्तित्व तथा विकास के लिए भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। निरंतर तेज़ी से बढ़ती जा रही जनसंख्या के दबाव के कारण लुप्त होती जा रही प्रजातियाँ तथा पारिस्थितिकीय व्यवस्थाओं के फलस्वरूप तथा प्राकृतिक पर्यावरण के योजनाविहीन विकास के कारण हमारी प्रजातियों के प्राकृतिक आवास शीघ्रता से समाप्त अथवा कुछ बदलने जा रहे हैं ।"

चौड़ी पत्ती वाले वृक्षों के स्वयंजात वन नष्ट हो गए हैं, जहाँ -जहाँ भी दुर्लभ जाति के पशु-पक्षी और वनस्पतियाँ मिलती हैं वे सब प्रायः पहाड़ी क्षेत्र हैं और बढ़ती हुई आबादी के कारण चूँकि इनका नाश रोकना संभव नहीं है अतः इनकी किस्मों की रक्षा अब राष्ट्रीय उद्यानों में ही संभव है। साथ ही इस बात की भी आवश्यकता है कि वन विभाग स्वयंजात वनों में लगने वाली वनस्पतियों को वनीकरण की नीति में विशेष स्थान दें खासकर ऐसी दशा में जबकि यह स्वीकार कर लिया गया है कि वनों का मुख्य उद्देश्य राजस्व में वृद्धि करना नहीं है। वन जिस समृद्धि की रक्षा करते रहे हैं और जो वह कर सकते हैं, उसके बारे में योजना आयोग का मत स्पष्ट है- "वे हमारे लोगों के भावी अस्तित्व तथा विकास के लिए भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं।"

ऊपर के उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वनों, पर्वतों और नदियों का बहुत नजदीकी रिश्ता है । ये तीनों ही एक साथ रहते हैं और एक साथ वन और नदियाँ मैदानों में उतरती हैं। लेकिन जिस प्रकार की वन व्यवस्था आज है उसमें न तो वनस्पतियाँ, न वन्य पशुओं और न ही नदियों की रक्षा संभव है। वनों का उपयोग उद्योग व्यापार में होगा। इससे विरत नहीं हुआ जा सकता । वनों की उपयोगिता मानव की समग्र समृद्धि के लिए है। समृद्धि की इस समग्रता में उसकी आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक समृद्धियाँ शामिल हैं।

देशी पौधों की बात करना और उनकी पहचान में घूमना अब पागलपन में गिना जाने लगा है। पढ़े-लिखे और तथाकथित शिक्षित लोग ऐसी बातों को उपहासास्पद मानते हैं और उन पर बात करना समय का अपव्यय मानते हैं। अब साहित्य में भी उनकी चर्चा नहीं आती । शाल, वेणु, धव, अश्वत्थ, तिंदुक, इंगुद, पलाश, अर्जुन, अरिष्ट, तिनिश, लोध, पद्मयम, प्रियाल, ताल पुन्नाग, पृक्ष आदि नाम और उनकी पहचान सब जगह से खो गई। वनस्पतिशास्त्र की किताबों में भी अगर ये वृक्ष हैं तो अपने वैज्ञानिक नामों से ही जाने जा सकते हैं । इनके देशज अथवा संस्कृत नाम तो समाप्त हो गए। स्वयंजात वनों के न रहने पर वनस्पतियों का यह भंडार समाप्त हो गया ।

आज इसकी पहले से कहीं अधिक जरूरत है कि हम अपनी जमीन को पहचानें, उस पर वनस्पतियों की रक्षा करें और नदियों से स्वच्छ जल प्रवाहित होनें दें।

अभ्यास

बोध प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. गंगा नदी की पहली तथा बड़ी पश्चिमी सहायक नदी कौन सी है?
2. नदियाँ हमारे जीवन के किस-किस पक्ष को समृद्ध करती हैं ?
3. 'स्वयंजात वन' किसे कहते हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय-भू-भौगोलिक स्थिति को ठीक-ठीक किस प्रकार समझा जा सकता है?
2. भारत के स्वयंजात वन कौन-कौन से हैं ?
3. जनसंख्या वृद्धि के प्रकृति पर क्या प्रभाव हो रहे हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. वन, पर्वत और नदियों के नजदीकी रिश्ते को स्पष्ट कीजिए।
2. भारत की नदियाँ अब मोक्षदायिनी क्यों नहीं रह गई हैं ? पाठ के आधार पर बताइए।
3. नदियाँ, पर्वतों और वनों से भरपूर देश की स्थिति में आज क्या परितर्वन आया है? स्पष्ट कीजिए।
4. वर्तमान समय में अपने परिवेश को प्रदूषण के प्रभाव से कैसे बचाया जा सकता है? टिप्पणी लिखिए।
5. आशय स्पष्ट कीजिए -

क. जब गंगा गंगा न रही, तब काशी की क्या स्थिति रहेगी ?

ख. वनों की उपयोगिता मानव की समग्र समृद्धि के लिए है। समृद्धि की इस समग्रता में उसकी आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक समृद्धियाँ शामिल हैं।

भाषा अध्ययन

1. **निम्नलिखित शब्दों की शुद्ध वर्तनी लिखिए :**

   पौरणिक, पश्चीमी, नरमदा, मंदीर, आर्थीक, स्थिती, शिघ्रता ।

2. **निम्नलिखित शब्दों को वाक्यों में प्रयोग कीजिए :**

   दर्दनाक, प्रदूषण, कृषि, समृद्धि, प्राकृतिक, स्थापना

3. **दिए गए शब्दों के विलोम शब्द लिखिए ।**

सम्मान, उन्नति, व्यापक, प्राचीन, आवश्यक, ज्ञान ।

4. **नीचे दिये गये शब्दों के हिन्दी रूप लिखिए :**

नजदीकी, खासकर, रिश्ता, जमीन, किस्म, दर्दनाक, अमलदारी ।

आइए जाने :

- ईश्वर और धर्म में विश्वास होने के कारण रामधन नित्य पूजा पाठ करता था लेकिन उसके पुत्र राधाकिशन का ईश्वर में विश्वास नहीं था। इसलिए वह पूजा पाठ में रुचि नहीं लेता था।
- रामधन आस्तिक होने से नित्य पूजा पाठ करता था, लेकिन उसका पुत्र राधा किशन नास्तिक होने से पूजा पाठ में रुचि नहीं लेता था।

उपर्युक्त दोनों अनुच्छेदों में एक ही बात दो प्रकार से कही गई है। पहले अनुच्छेद में अधिक विस्तार है जबकि दूसरे अनुच्छेद में अनेक शब्दों (वाक्यांश) के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग करके संक्षेप में कहा गया है।

वस्तुतः भाव प्रकाशन के लिए अनेक शब्दों के स्थान पर सूत्र रूप में एक शब्द का सार्थक प्रयोग किया जाता है। इसके कारण भाव परिवर्तन नहीं होता, अपितु भाषा में कसावट आ जाती है और वह प्रभावशाली बन जाती है।

5. **दिए गए वाक्यांशों के लिए एक-एक शब्द लिखिए -**
   1. जिसे स्वीकार न किया जाए -
   2. जो धरती बंजर हो -
   3. शिक्षा ग्रहण करने का स्थान -
   4. दूर तक की समझ रखने वाला -
   5. सब प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न -
   6. जिसका कोई पार न हो -

योग्यता विस्तार

1. आज हमें ज़मीन से जुड़ने, नदियों का महत्त्व पहचानने और पर्यावरण की रक्षा करने की आवश्यकता पहले से अधिक है। इस विषय पर दस वाक्य लिखिए।
2. जल संरक्षण कैसे हो ? इस बारे में जानकारी प्राप्त कर जल संरक्षण करना सीखें ।
3. जल के बढ़ते प्रदूषण को रोकना आज की विशेष आवश्यकता है- इस विषय पर चिन्तन करें तथा कार्य योजना बनाएँ।
4. 'वनों की महत्ता' एवं 'जल संरक्षण' शीर्षक पर आधारित रूपरेखा तैयार कर निबंध लिखकर शिक्षक को दिखाइए।
5. आज इनकी पहले से कहीं अधिक जरूरत है कि हम अपनी जमीन को पहचानें उस पर वनस्पतियों की रक्षा करें और नदियों से स्वच्छ जल प्रवाहित होने दें। इसे सूत्र वाक्य मानते हुए हम क्या-क्या प्रयास करेंगे कि जल संरक्षित हो?

शब्दार्थ

विपुल - बहुत अधिक, आवृत्त - छाया हुआ/घना, समग्र - सभी, मोक्षदायिनी - मोक्ष देने वाली,

उद्धरण - उदाहरण, उथली - सतही/जो गहरी न हो, अतिशयोक्ति - बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन

* * *